डेरी समाचार

भाकृअनुप – राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल की त्रैमासिक विस्तार पत्रिका

वर्ष 48 | जनवरी – मार्च 2018 | अंक – 1

सोलहवां दीक्षान्त समारोह सम्पन्न

किसी भी शिक्षण संस्थान के लिये वे क्षण गौरवपूर्ण होते हैं, जब वहाँ के विद्यार्थी अपना अध्ययन पूरा करके उपाधि प्राप्त करते हैं। विगत, दिनांक 10-03-2018 को राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल में सोलहवां दीक्षान्त समारोह सम्पन्न हुआ। इस गरिमामय अवसर पर मुख्य अतिथि एवं अन्य गणमान्य अतिथि संस्थान में पधारे।

मुख्य अतिथि श्री राधा मोहन सिंह, माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार ने विद्यार्थियों और जनसमूह को सम्बोधित करते हुए कहा कि यह संस्थान देश के युवाओं को प्रशिक्षित करने एवं पेशेवर रूप से तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है और युवा शक्ति की नयी सोच से देश को आगे ले जाने का कार्य कर रहा है। इस अवसर पर डा. त्रिलोचन महापात्रा, महानिदेशक, भाकृअनुप(सचिव डेयर, कृषि शोध व शिक्षा विभाग) ने संस्थान का दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए

सोलहवां दीक्षांत समारोह
SIXTEENTH CONVOCATION
10 मार्च, 2018

सम्पादकीय

विगत तीन दशकों में कृषकों, वैज्ञानिकों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं डेरी उद्योग से जुड़ी संस्थाओं के प्रयासों से तथा उन्नत पशुधन के विकास से भारत के दुग्ध उत्पादन में आशातीत बढोतरी हुई है, और आज दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में भारत की यश कीर्ति पताका सबसे आगे फहरा रही है। धीरे-धीरे डेरी व्यवसाय को स्वतन्त्र व्यवसाय के रूप में अच्छी खासी मान्यता मिलती जा रही है। प्रसन्नता का विषय है कि हमारे पशुपालकों में प्रगतिशीलता बढ़ रही है और उनकी जागरूकता डेरी मेला एवं अन्य अवसरों पर दिखाई देती है। हमारे देश के पशुपालकों के पास ऐसी उन्नत नस्लें हैं जो 50 किलो प्रतिदिन से अधिक दूध देती हैं। वे अपने पशुओं के पोषण, प्रजनन और स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रखते हैं। अन्य पशुपालक भी इससे प्रेरणा ले सकते हैं। उन्नत पशुधन, समुचित प्रजनन, पोषण, प्रबन्धन एवं स्वास्थ्य रक्षा आदि कुछ मूलभूत बाते हैं, जिनको अपनाकर पशुपालक अपने पशु से अधिक दूध प्राप्त कर सकते हैं। डेरी व्यवसाय एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है, परन्तु साथ ही यह बहुत से अन्य व्यवसायों का जन्मदाता भी है। सम्पूर्ण वर्ष इससे रोजगार प्राप्त हो सकता है। दुग्ध उत्पादों का बाजार दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है जो कि डेरी उद्योगकर्ताओं और कृषकों की आजीविका के नये द्वार खोलता है। डेरी व्यवसाय के कुछ महत्वपूर्ण लाभ हैं। ये फसल उत्पादन का पूरक है। सीमान्त भूमि का उपयोग हो जाता है। परिवार के सदस्य विशेषत: महिलाऐं भी पूर्ण योगदान कर सकती हैं। अत: इस व्यवसाय को कृषक नि:संकोच अपना सकते हैं। साथ ही इस व्यवसाय में सफलता के लिये पशुपालकों को प्रशिक्षण प्राप्त करना, डेरी प्रसार कार्यकर्ताओं से सम्पर्क बनाना इस क्षेत्र में विकसित नयी तकनीकियों और परिवर्तनों को अपनाना तथा अनुसंधान संस्थाओं से जुड़े रहना, कुछ ऐसे मूल मंत्र हैं, जो प्रगति का मार्ग प्रशस्त करता है।

लाभदायक तरीके से तकनीकी विकास एवं पशुपालन व्यवसाय में योगदान के लिये विशेष प्रशंसा की। संस्थान के इस क्षेत्र में सतत् प्रयास के फलस्वरूप डेरी व्यवसाय में बढ़ोतरी की आशा की जा रही है। विगत दो दशकों में भारत में दुग्ध उत्पादन दो गुना हुआ है। कृषकों के सामूहिक प्रयासों से भारतीय कृषि को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा एक प्रारूप के रूप में देखा जा रहा है। यद्यपि उन्होंने आहार और चारे में कमी, अच्छे जनन द्रव्य की कमी और अच्छी गुणवत्ता वाले दुग्ध उत्पादों की आवश्यकता पर भी चर्चा की। विश्व बाजार में भारतीय दुग्ध उत्पादों का हिस्सा एक प्रतिशत से भी कम है। उन्होंने विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि उनके लिये अनुसंधान क्षेत्र के अलावा, पब्लिक और प्राइवेट सेक्टर में रोजगार और व्यवसाय के अनेक सुअवसर हैं। उन्होंने छात्रों को बधाई दी तथा संस्थान के वैज्ञानिकों के शिक्षण और अनुसंधान प्रयासों की सराहना की।

संस्थान के निदेशक एवं कुलपति डा. आर.आर.बी. सिंह ने संस्थान की उपलब्धियों और कार्यकलापों पर प्रकाश डाला और छात्रों को बधाई दी। इस अवसर पर 17 बी.टैक, 146 मास्टर और 105 पी.एच.डी. छात्रों को सबंधित उपाधियों से अलंकृत किया गया। ''शिक्षा के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ'' विद्यार्थियों को स्वर्णपदक, रजत पदक एवं कांस्य पदक से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्रेष्ठ शिक्षक पुरस्कार भी प्रदान किये गये। गणमान्य अतिथियों की उपस्थिति ने दीक्षांत समारोह की शोभा बढ़ाई।

पशुधन बीमा योजना

सीमा चौपड़ा (दुग्ध सरिता, 2017)

पशुपालन राज्य सरकार का विषय है तथा इस क्षेत्र के विकास के लिए राज्य सरकार मुख्य रूप से जिम्मेदार है । परंतु भारत सरकार द्वारा भी डेरी विकास तथा पशुपालन के लिए अनेक योजनाए चलायी जा रही हैं तथा प्रयास किये जा रहे हैं । कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत पशुपालन, डेरी और मतस्यपालन विभाग पशुओं के संकरण तथा आनुवंशिक उन्नयन के लिए 30 केंद्रीय पशुधन संस्थाए तथा सहयोगी संस्थाएं चला रहा है । इसके अलावा, पशुपालन क्षेत्र के तेज विकास के लिए आवश्यक बुनियादी सुविधाओं तथा राज्य सरकारों के प्रयासों की प्रतिपूर्ति के लिए विभाग द्वारा 11 क्षेत्रीय तथा केंद्रीय प्रायोजित योजनाएं चलाई जा रही है । इन केंन्द्र प्रायोजित योजनाओं में एक महत्वपूर्ण योजना है पशुधन बीमा योजना । पशुधन बीमा योजना 10वीं पंचवर्षीय योजना के वर्ष 2005–06 तथा 2006–07 और 11वीं पंचवर्षीय योजना के वर्ष 2007–08 में प्रयोग के तौर पर देश के 100 चयनित जिलों में क्रियान्वित की गई थी । अब यह योजना देश के सभी 716 जिलों में नियमित रूप से चलाई जा रही है । इस लेख में किसानों तथा पशुपालकों के लिए पशुधन बीमा योजना की विस्तृत जानकारी प्रश्नोतरी के माध्यम से देने का प्रयास किया गया है।

पशुधन बीमा योजना क्या है?

कृषि में ज्यादातर कृषि कार्य पशुओं द्वारा संपन्न किए जाते है। हर पशु का अंत होता है और वह या तो प्राकृतिक होता है या फिर किसी दुर्घटना और बीमारी के कारण होता है। यदि पशु का बीमा करवाया गया है तो पशुओं की मृत्यु हो जाने पर बीमा कंपनियों से उसके मूल्य का हिस्सा प्राप्त हो जाता है, जिससे होने वाले नुकसान की कुछ हद तक भरपाई हो सकती है। इस प्रकार यह योजना पशुपालकों की आजीविका सुरक्षित रखने में सहायक होती है।

योजना के अंतर्गत कितने पशुओं का बीमा कराया जा सकता है ?

दो दुधारू पशुओं से पांच दुधारू पशु अथवा अन्य पशु या 50 छोटे पशुओं तक का बीमा कराया जा सकता है।

पशु बीमा करवाने पर कितना अनुदान प्राप्त होता है ?

बीमा की प्रीमियम राशि के 50 प्रतिशत तक अनुदान प्राप्त होता है। सामान्य क्षेत्रों में गरीबी रेखा से ऊपर के लाभार्थियों के लिए अनुदान का 25 प्रतिशत राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। गरीबी रेखा से नीचे के लाभार्थियों के लिए केन्द्र सरकार द्वारा 40 प्रतिशत तथा राज्य सरकार द्वारा 30 प्रतिशत के हिस्से का वहन किया जाता है। उतर पूर्वी /पर्वतीय क्षेत्रों तथा एलडब्लूई (लेफ्ट विंग एक्स्ट्रीमिस्ट) प्रभावित क्षेत्रों में गरीबी रेखा से ऊपर के लाभार्थियों के लिए अनुदान का 35 प्रतिशत हिस्सा केंद्र सरकार द्वारा और 25 प्रतिशत हिस्सा राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है और गरीबी रेखा से नीचे के लाभार्थियों के लिए अनुदान का 45 प्रतिशत हिस्सा केंद्र सरकार द्वारा और 25 प्रतिशत हिस्सा राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है और गरीबी रेखा से नीचे के

लाभार्थियों के लिए 60 प्रतिशत केन्द्र सरकार द्वारा तथा 30 राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। अनुदान का लाभ अधिकतम दो पशु प्रति लाभार्थी को अधिकतम तीन वर्षों की बीमा पॉलिसी के लिए मिलता है।

कितनी अधिकतम और न्यूनतम राशि का बीमा करवाया जा सकता है?

पशुओं का बीमा उनके अधिकतम बाजार मूल्य पर किया जाता है। बीमे की राशि प्रत्येक कंपनी के अनुसार अलग– अलग होती है, और आसान किस्तों में बीमा राशि का 30 प्रतिशत होता है। बीमे की राशि साधारण रूप से पशु की बाजार कीमत के बराबर होती है।

इस योजना के अंतर्गत कौन– कौन से पशुओं का बीमा करवाया जा सकता है?

देसी/संकर दुधारू मवेशी और भैंस योजना के दायरे में आते हैं। दुधारू पशु/भैंस में दूध देने वाले तथा दूध न देने वाले ऐसे गर्भवती मवेशी जिन्होने कम से कम एक बार बछडे को जन्म दिया हो शामिल होंगे। भेड–बकरी, सूअर और खरगोश को एक पशु इकाईयों तक ही सीमित होगा। एक पशु इकाई में 10 भेड/बकरी/सूअर/खरगोश होंगे।

किसी भी परिस्थिति में प्रीमियम की दर वार्षिक पॉलिसी के लिए सामान्य क्षेत्र में 3 प्रतिशत, उत्तर –पूर्वी तथा पर्वतीय क्षेत्रों में 3.5 प्रतिशत और कठिन क्षेत्रों में 4 प्रतिशत से अधिक होना चाहिए। तीन वर्ष की बीमा पॉलिसी के लिए यह दर क्रमशः 7.5 प्रतिशत, 9.0 प्रतिशत और 10.5 प्रतिशत से अधिक नही होना चाहिए।

बीमा कंपनी से बीमे की भरपाई लेने हेतु जरूरी दस्तावेज कौन से है?

पशु की मृत्यु के बाद बीमा कंपनी से उसकी भरपाई लेने हेतु निम्नलिखित दस्तावेज बीमा कंपनी को देने आवश्यक हैं:

1) बीमे का दावा
2) पशु की पोस्टमार्टम रिपोर्ट
3) मृत पशु का मृत्यु पूर्व चिकित्सा उपचार चल रहा हो तो उसकी रिपोर्ट
4) पशु का फोटो

दावा आवेदन में मृत पशु की संपूर्ण जानकारी, उसका विवरण, जिस तारीख को बीमार हुआ वह तिथि, इलाज की तारीखें तथा दवाईयों की पर्चियां, जिस पशु चिकित्सक ने इसका उपचार किया उसका नाम एवं पता पशु की मृत्यु की तिथि एवं समय लिखा होना आवश्यक है।

बीमा राशि कैसे प्राप्त की जा सकती है?

जिस पशु का बीमा करवाया गया है, यदि उसकी मृत्यु हो जाए तो उसकी लिखित रूप से सूचना बीमा कंपनी को देकर उसकी रसीद प्राप्त करें। अगर पशु बैंक से कर्ज लेकर खरीदा है तो उस बैंक के कार्यालय में भी लिखित रूप में सूचना देकर रसीद प्राप्त करें। उसके बाद मरे हुए पशु का पोस्टमार्टम करवाकर उसकी रिपोर्ट बीमा कंपनी को दें। सारी रसीदें तथा रिपोर्ट बीमा कंपनी को दें। सारी रसीदें तथा रिपोर्ट की फोटो प्रतियां अपने पास संभालकर रखें। कभी–कभी आसपास पशुओं का डॉक्टर उपलब्ध नहीं होता, ऐसी स्थिति में ग्राम पंचायत के सरपंच/मुखिया, सहकारी आर्थिक संस्था के अध्यक्ष या पदाधिकारी या जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के निरीक्षक, इनमें से किन्हीं दो व्यक्तियों के द्वारा दिए गए मृत्यु प्रमाण मत्र को कुछ पशु बीमा कंपनियां स्वीकार कर लेती हैं। आवश्यक दस्तावेज जमा करने के 15 दिन के भीतर बीमित राशि का भुगतान निश्चित तौर पर कर दिया जाना चाहिए। यदि बीमा कंपनी ऐसा करने में विफल रहती है, तो उसे लाभार्थी को प्रति वर्ष 12 प्रतिशत के चक्रवृद्धि ब्याज का भुगतान जुर्माने के रूप में करना होगा। पशु का बीमा कराते समय मुख्य कार्यकारी अधिकारी यह सुनिश्चित करते हैं कि दावे के निपटारे हेतु स्पष्ट प्रक्रिया का प्रावधान किया जाए एवं पॉलिसी के दस्तावेजों के साथ उसकी सूची संबंधित लाभार्थियों को भी उपलब्ध कराई जाए।

बीमात पशुओं की पहचान कैसे की जाती है?

बीमा किये गये पशु की बीमा राशि के दावा के समय उसकी सही तथा प्रामाणिक तरीके से पहचान की जानी चाहिए। अतः कान में किये गये अंकन को हरसंभव तरीके से सुरक्षित किया जाना चाहिए। पॉलिसी लेने के समय कान के किये जाने वाले पारंपरिक अंकन या हाल के माइक्रोचिप लगाने की तकनीकी का प्रयोग किया जाना चाहिए। पहचान चिह्न लगाने का खर्च बीमा कंपनी द्वारा वहन किया जाएगा तथा इसके रखरखाव की जिम्मेदारी संबंधित लाभार्थियों की होगी।

इस प्रकार पशु बीमा योजना एक ऐसी योजना है, जिससे किसानों और पशुपालकों की सुरक्षित और जोखिम रहित आजीविका सुनिष्चित की जा सकती है। पशुपालन से प्रास्त होने वाली पूरक आय किसानों को फसल उत्पादन की अनिश्चितताओं का सामना करते हुए जीविका प्रदान करने का एक बड़ा स्रोत है। इस बारे में अधिक जानकारी के लिए निकट की बीमा कंपनी से संपर्क किया जा सकता है।

गर्मी व बरसात के मौसम में डेरी पशुओं को कैसे खिलायें?

चन्द्र दत्त, वीना मणि एवं अविलेश शर्मा

गर्मी के मौसम में, विशेषतया जब वातावरण तापमान में वृद्धि के साथ–साथ उमस भी अधिक हो, डेरी पशुओं के उत्पादन पर बुरा असर पड़ता है। इस वातावरण में पशु अपने शरीर में उत्पन्न गर्मी को वातावरण में निष्कासित नहीं कर पाते, जिसके फलस्वरूप उनके शरीर का तापमान बढ़ जाता है और रात के समय तापमान घटने पर कुछ घन्टों ही राहत महसूस कर पाते हैं। इस स्थिति से निपटना पशुपालकों के लिए एक बड़ी चुनौती है। हमारे देश के कई भाग उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में पडते हैं, जिस कारण खासकर अप्रैल से सितम्बर तक काफी गर्म व उमस भरे दिन होते हैं। इसके साथ–साथ, फसल चक्र भी इस प्रकार है कि मई–जून में हरे चारे की कम उपलब्धता इस समस्या को और भी गम्भीर बना देती है। ऐसे मौसम में पशुओं के दूध उत्पादन में गिरावट, प्रजनन क्षमता में कमी, पशुओं के स्वास्थ्य में गिरावट, जल्दी–जल्दी पानी पीना, खुराक कम होना, पशुओं की वाहक क्षमता में कमी, श्वसन दर में वृद्धि इत्यादि असर देखे जा सकते हैं। खासकर विदेशी व संकर नस्ल के पशु इन कारकों से अधिक प्रभावित होते हैं।

इन सब परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कुछ कदम उठाने चाहिए, जैसे गर्मी को सहन कर पाने वाले पशुओं का चयन, वातावरण को ठण्डा रखने हेतु कुछ सुविधाएं जैसे छायादार पेड़,

पंखा, कूलर आदि की व्यवस्था, पशुपोषण में आवश्यक फेरबदल, जिसके फलस्वरूप पशुओं के आहार द्वारा उत्पन्न गर्मी की मात्रा कम हो, इत्यादि। इस आलेख में हम केवल पशु पोषण सम्बन्धी बातों का जिक्र कर रहे हैं, ताकि पशुधन को इस मौसम के कारण होने वाले संभावित दुष्प्रभाव से बचाया जा सके।

1. गर्मी के कारण पशु की भूख प्रभावित होती है परन्तु विभिन्न पोषण तत्वों की आवश्यकताएँ बढ़ जाती हैं। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए आहार के विभिन्न अवयवों का चयन करना चाहिए, ताकि वे ज्यादा खा पाएं और समुचित मात्रा में पोषक तत्व भी प्राप्त हो सकें। इसके अतिरिक्त, आहार से उत्पन्न ऊर्जा की मात्रा भी कम हो ताकि पशु पर अतिरिक्त दबाव न बनें। सबसे पहले तो राशन में ऊर्जा की मात्रा बढ़ानी चाहिए, क्योंकि भूख कम लगने का सीधा प्रभाव उनकी ऊर्जा की उपलब्धता पर पड़ता है। इसके लिए सबसे सरल तरीका है चारे की मात्रा कम कर दें और दाने की मात्रा अधिक। इससे राशन का घनत्व बढ़ जायेगा (कम रेशा होने के कारण आहार की अर्न्तग्राहयता बढ़ेगी) यहाँ पर एक बात और बताने योग्य है कि अलग–अलग प्रकृति के खाद्य पदार्थ पचने के दौरान अलग–अलग मात्रा में गर्मी उत्पन्न करते हैं, जिसे ''ताप वृद्धि'' (Heat Increment) कहते हैं। वसा पचने के दौरान सबसे कम तथा कार्बोहाईड्रेट से सबसे अधिक व प्रोटीन से उससे अधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है। कार्बोहाईड्रेट की मात्रा के साथ–साथ उसकी प्रकृति/संरचना भी महत्व रखती है। स्टार्च आदि से कम तथा रेशे से ज्यादा ऊष्मा उत्पन्न होती है। इसलिए आहार में भूसा या अन्य सूखे चारे की मात्रा कम कर दें। आहार से अधिक ऊर्जा वाले खाद्य जैसे खल, तिलहन आदि ज्यादा शामिल करें।
2. अधिक दूध देने वाले पशुओं के आहार में खल की अपेक्षा तिलहन की मात्रा बढ़ाने से पशु को थोड़े आहार से अधिक ऊर्जा मिलेगी जिसके फलस्वरूप उत्पादन स्तर बना रहेगा। पूरे राशन में यदि 6 प्रतिशत से अधिक वसा हो तो उसका रेशे की पाचकता पर दुष्प्रभाव पड़ता है। ऐसी अवस्था में बाईपास वसा खिलाना एक विकल्प है।
3. आहार में प्रोटीन की मात्रा आवश्यकता से अधिक होना भी वांछनीय नहीं है क्योंकि ऐसे में मूत्र द्वारा अधिक नाईट्रोजन (यूरिया के रूप में) निष्कासन के कारण पशु को अधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। उस दशा में यदि 18 प्रतिशत से अधिक प्रोटीन हो तो खून में भी यूरिया की मात्रा बढ़ जाती है जोकि पशु के शरीर के तापमान को प्रभावित करती है।
4. प्रोटीन की कमी तो प्रत्यक्ष रूप से उत्पादन पर बुरा प्रभाव डालती है। साथ में प्रोटीन की गुणवत्ता का भी ध्यान रखना चाहिए। आहार में 60 प्रतिशत से अधिक रयूमन पाचनशील प्रोटीन हो ताकि पशु को 40 प्रतिशत बाईपास प्रोटीन उपलब्ध हो सके जिससे पशु को एमिनो अम्ल अधिक मात्रा में उपलब्ध होंगे। लाइसिन एक अमीनों अम्ल है जो अनाज/तिलहन से अपर्याप्त मात्रा में होता है इसके निदान स्वरूप 1 प्रतिशत रासायनिक लाइसिन आहार में मिलने से अधिक दूध उत्पादन क्षमता वाले पशुओं के दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होगी।
5. जैसे कि ऊपर बताया गया है कि आहार में दाने की मात्रा अधिक व सूखा चारा कम देना चाहिए परन्तु इससे रयूमन में अम्लता की संभावना बढ़ जाती है। उससे बचने के लिए आहार में एक प्रतिशत मीठा सोडा/पाटेशियम कार्बोनेट अथवा बाइकार्बोनेट मिलाने से अम्लता की सम्भावना कम हो जायेगी एवं दूध में वसा की मात्रा में गिरावट भी नहीं आयेगी।
6. गर्मी के दबाव के कारण पशुओं की खनिज तत्वों के उपापचय पर प्रभाव पड़ता है, जिसमें विशेषकर सोडियम व पोटेशियम शामिल है। इस मौसम में पसीने द्वारा सोडियम व पोटेशियम निकलते रहते हैं, जिसकी भरपाई आहार द्वारा की जानी चाहिए। वैसे भी हरे चारे की कम उपलब्धता के कारण पोटेशियम का अंश आहार में कम रहता है।
7. गर्मी में पशु हांफने लगता है जिससे अधिक मात्रा में कार्बन डाईऑक्साइड सांस द्वारा बाहर निकलने के कारण सांस लेने में दिक्कत आती है। इस मौसम में विशेषकर मिनरल मिक्सचर जैसे कैटायोनिक आधारित डीकैड मिश्रण लाभकारी है।
8. हरे चारे की कमी में साइलेज खिलाना भी लाभकारी है क्योंकि साइलेज बनाने की प्रक्रिया में चारा कुछ हद तक किण्वित हो जाता है। अतः यह जल्दी पचेगा और पाचन के दौरान गर्मी का दबाव पशु पर अपेक्षाकृत कम होगा।
9. आहार के साथ–साथ पानी की मात्रा व गुणवत्ता महत्व रखती है। अतः पशु को प्रचुर मात्रा में पानी उपलब्ध करवाना जरूरी है, जिससे पशु पर गर्मी का दबाव कम हो और उसके शरीर का तापमान सामान्य रहे।

हमें आशा है कि डेरी व्यवसाय से जुड़े किसान भाई इन सभी बातों का लाभ उठायेंगे ताकि पशुओं को गर्मी और आर्द्रता वाले मौसम में होने वाले दुष्प्रभाव से बचाया जा सके।

खरीफ में हरे चारे की फसल के लिए ज्वार की बुवाई करें

उत्तम कुमार

खरीफ में ज्वार की फसल सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। ज्वार की किस्मों में एक कटाई से लेकर तीन–चार कटाइयां देने की क्षमता है। गर्मी के मौसम में उगाई गई ज्वार में पानी की कमी नहीं होनी चाहिए क्योंकि ज्वार के चारे में धुरिन नामक विषैले पदार्थ की मात्रा विशेषकर गर्मी के मौसम में अधिक हो जाती है। पशुओं के लिए इसका चारा पर्याप्त रूप से पौष्टिक होता है। ज्वार का हरा चारा, कड़वी तथा साइलेज तीनों ही रुपो मे पशुओं के लिए उपयोगी हैं।

खेत की तैयारी

इसकी खेती वैसे तो सभी प्रकार की मिटटी में की जा सकती है परन्तु दोमट, बलुई दोमट, सर्वोत्तम मानी गई है। ज्वार के लिए खेत को अच्छी तरह तैयार करना आवश्यक है। सिंचित इलाकों में दो बार गहरी जुताई करके पानी लगाने के बाद बत्तर आने पर दो जुताइयां करनी चाहिए।

बुवाई का समय

सिंचित इलाकों में ज्वार की फसल 20 मार्च से 10 जुलाई तक बो देनी चाहिए। जिन क्षेत्रों में सिंचाई उपलब्ध नहीं है वहां बरसात की फसल मानूसन में पहला मौका मिलते ही बो देनी चाहिए।अनेक कटाई वाली किस्मों/संकर किस्मों की बिजाई अप्रैल के पहले पखवाड़े में करनी चाहिए। यदि सिंचाई व खेत उपलब्ध न हो तो

बिजाई मई के पहले सप्ताह तक की जा सकती है।

चारे की विभिन्न किस्में

एक कटाई देने वाली किस्में– हरियाणा चरी 136 ,हरियाणा चरी 171, हरियाणा चरी 260, हरियाणा चरी 308, पी.सी–9 अधिक कटाई वाली किस्में– मीठी सूडान (एस एस जी 59–3द्ध ,एफ एस एच 92079 ;सफेद मोती) बीज एवं बीज की मात्रा यदि खेत भली प्रकार तैयार हो तो बुआई सीडड्रिल से 2.5 से 4 सैं.मी. गहराई पर एवं 25–30 सैं.मी. की दूरी पर लाइनों में करें। ज्वार की बीज दर प्रायः बीज के आकार पर निर्भर करती है। बीज की मात्रा 18 से 24 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई करें। यदि खेत की तैयारी अच्छी प्रकार न हो सके तो छिटकाव विधि से बुआई की जा सकती है जिसके लिए बीज की मात्रा में 15–20 प्रतिशत वृद्धि आवश्यक है। अधिक कटाई वाली किस्में/संकर किस्मों के लिए 8–10 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ के हिसाब से डालें।

खाद एवं उर्वरक

सिंचित इलाकों में इस फसल के लिए 80 किलोग्राम नाइट्रोजन व 30 किलोग्राम फास्फोरस प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। सही तौर पर 175 किलोग्राम यूरिया और 190 किलोग्राम एस एस पी एक हैक्टर में डालना पर्याप्त रहता है। यूरिया की आधी मात्रा और एस एस पी की पूरी मात्रा बिजाई से पहले डालें तथा यूरिया की बची हुई आधी मात्रा बिजाई के 30–35 दिनों बाद खड़ी फसल में डालें। कम वर्षा वाले व बारानी इलाकों में 50 किलोग्राम नाइट्रोजन (112 किलोग्राम यूरिया) प्रति हैक्टर बिजाई से पहले डालें।अधिक कटाई देने वाली किस्मों में 50 किलो नाइट्रोजन व 30 किलो फास्फोरस प्रति हैक्टर बिजाई से पहले व 30 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टर हर कटाई के बाद सिंचाई उपरान्त डालने से अधिक पैदावार मिलती है।

सिंचाई

वर्षा ऋतु में बोई गई फसल में आमतौर पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती । यदि बरसात का अन्तराल बढ़ जाए तो आवश्यकता के अनुसार सिंचाई करें। मार्च व अप्रैल में बीजी गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 15–20 दिन बाद तथा आगे की सिंचाई 10–15 दिन के अन्तर पर करें। मई–जून में बीजी गई फसल में 10–15 दिन के बाद पहली सिंचाई करें तथा बाद में आवश्यकतानुसार करें।अधिक कटाई वाली किस्मों में हर कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करें। इससे फुटाव जल्दी व अच्छा होगा।

खरपतवार नियन्त्रण

ज्वार में खरपतवार की समस्या विशेषतौर पर वर्षाकालीन फसल में अधिक पायी जाती है।सामान्यतः गर्मियों में बीजी गई फसल में एक गोड़ाई पहली सि ंचाई के बाद बत्तर आने पर करनी चाहिए। यदि खरपतवार की समस्या अधिक हो तो एट्राजीन का छिड़काव करे। क्योंकि चारे की ज्वार में किसी भी प्रकार के रसायन के छिड़काव को बढ़ावा नहीं दिया जाता।

रोग एवं कीट नियन्त्रण

चारे की फसल में छिडकाव कम ही करना चाहिए तथा छिडकाव के बाद 25–30 दिन तक फसल पशुओं को नहीं खिलानी चाहिए।

कटाई और एच.सी.एन. का प्रबन्ध

चारे की अधिक पैदावार व गुणवत्ता के लिए कटाई 50 प्रतिशत सिट्टे निकलने के पश्चात् करें। एच.सी.एन. ज्वार में एक जहरीला तत्त्व प्रदान करता है अगर इसकी मात्रा 200 पी.पी.एम. से अधिक हो तो यह पशुओं के लिए हानिकारक हो सकता है। 35–40 दिन की फसल में एच,सी.एन. की मात्रा अधिक होती है। लेकिन 40 दिन के बाद इसकी मात्रा घटने लगती है। अतः ज्वार के चारे को 40 दिन से पहले नहीं काटना चाहिए। अगर कटाई 40 दिन में करनी अत्यन्त आवश्यक हो तो कटे हुए चारे को पशुओं को खिलाने से पहले 2–3 घंटे तक खुली हवा में छोड़ दे ताकि एच.सी.एन. की मात्रा कुछ कम हो सके।

अधिक कटाई वाली किस्मों में हरे चारे की अधिक पैदावार के लिए पहली कटाई बिजाई के 50 से 55 दिनों के पश्चात् एवं शेष सभी कटाइयां 35–40 दिनों के अन्तराल पर करें। अगर पहली कटाई देर से की जाए तो सूखे चारे में वृद्धि होती है परन्तु हरे चारे की पैदावार व गुणवत्ता कम हो जाती है। अच्छे फुटाव के लिए फसल को भूमि से 8–10 सैं.मी. की ऊँचाई पर से काटें।

बीज का बनाना

दाने वाली फसल के लिए बिजाई 10 जुलाई तक करें। इस समय बीजी गई फसल से दाने की पैदावार सबसे ज्यादा मिलती है। जल्दी बीजी गई फसल में मिज कीड़े का आक्रमण इतना अधिक होता है कि दाने का रस चूसने से पैदावार काफी घट जाती है।

उपज

चारे की उपज ज्वार की किस्म तथा कटाई की अवस्था पर काफी कुछ निर्भर करती हैं यदि उन्नत तरीकों से खेती की जाए तो एक कटाई वाली फसल से 250–400 कुन्तल व अधिक कटाई वाली किस्मों से हरे चारे की उपज 500–700 कुन्तल प्रति हैक्टर प्राप्त हो जाती हैं।

पशुओं में थनैला रोग के लक्षण व रोकथाम के उपाय

मनीष सावंत, के.एस. कादियान एवं ओम वीर सिंह

यह रोग दुधारू पशुओं में कई प्रकार के जीवाणुओं द्वारा होता है। इस रोग से दुग्ध व्यवसाय में काफी आर्थिक हानि होती है। दुधारू पशुओं में यह रोग ज्यादा पाया जाता है। इस रोग से प्रभावित पशु के दूध में भौतिक, रासायनिक व सूक्ष्मजीवी परिवर्तन हो जाते है और पशुओं के थनों में सूजन व खराबी आ जाती है। दूध का रंग व स्वाद बदल जाता है। दूध में थक्के दिखाई देते हैं। रोग से प्रभावित पशु के दूध उत्पादन में 21 प्रतिशत एवं वसा में 25 प्रतिशत तक की कमी हो जाती है।

प्रभावित पशु : यह रोग सभी नस्लों की दुधारू गायों, भैंसों, बकरी, भेड़, सुअर व घोड़ों में होने की संभावना होती है। ज्यादा दूध देने वाले पशुओं में यह रोग कम दूध देने वाले की अपेक्षा अधिक होता है जैसे–जैसे ब्याँत की संख्या बढ़ती जाती है इस रोग के संक्रमण की संभावनाएँ बढ़ती जाती है। आमतौर पर विदेशी व संकर नस्ल की गायों में यह रोग देशी नस्ल की गायों की अपेक्षा अधिक होता है।

रोग प्रसार के प्रकार :– इस रोग का संक्रमण थन छिद्रो में जीवाणुओं के प्रवेश से होता है। इसका संक्रमण दो प्रकार से होता है। जीवाणु जो थन में पाये जाते हैं व दूसरे जो वातावरण में मौजूद

रहते हैं। यह रोग दूध निकालने वाले के गन्दे हाथों, कपड़ों व मशीन द्वारा भी फैलता है।

रोग फैलाने के कारक :– यह निम्न कारकों से प्रभावित होता है :– पशु की उम्र, पशु की नस्ल, ब्यांत की संख्या, दुग्ध दोहन की विधि व पूर्ण दूध निकालना, झुंड में पशुओं की संख्या, पशु आहार के प्रकार, मौसम, आनुवंशिकी, थन में चोट लगना, पशुओं व वातावरण की सफाई, पशुओं की प्रतिरोधक क्षमता, पहले से प्रभावित थन, जेर का न गिरना।

लक्षण :– यह रोग पशुओं में दो प्रकार का होता है।

(अ) लक्षण रहित रोग (सब क्लीनिकल मैसटाइटिस):– इस रोग को सबक्लीनिकल थनैला रोग भी कहते हैं। लक्षण रहित रोग का पता केवल दूध की जाँच से ही चल सकता है, क्योंकि इस रोग में न तो थनों में सूजन आती है न ही थन गर्म प्रतीत होते हैं और न ही पशु दर्द महसूस करता है। दूध देखने से कुछ पता नहीं लगता लेकिन दुग्ध उत्पादन में कमी आ जाती है। इस लक्षण रहित रोग से किसान को सर्वाधिक आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

(ब) लक्षण युक्त रोग (क्लीनिकल मैसटाइटिस):– यह रोग चार वर्गों में वर्गीकृत किया गया है।

1. **अति तीव्र रोग** :– इस प्रकार के रोग में पशु के शरीर का तापमान 106–107 डिग्री फा. तक चला जाता है, पशु चारा नहीं खाता व सांस की तकलीफ बढ़ जाती है। थनों में सूजन आ जाती है और पशु को दर्द अधिक होता है। पशु दूध देना बन्द कर देता है और अगर दूध स्रावित होता भी है तो वह रक्त युक्त होता है।
2. **तीव्र रोग** :– इस रोग में शरीर का तापमान लगभग स्थिर रहता है। थन में सूजन आ जाती है और दूध पीला या भूरा रंग के गाढ़े द्रव के रूप में निकलता है जिसमें दूध जमें पदार्थ भी होते हैं। संक्रमण केवल थनों या पूरे अयन में होता है। जिस तरफ की थनों में सूजन आ जाती है, पशु उस तरफ से लंगड़ा कर चलता है।
3. **कम तीव्र प्रकार** :– इस प्रकार के रोग से दूध में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन दिखाई देते हैं परन्तु थन में कोई भी परिवर्तन नहीं होता है।
4. **धीमा प्रकार** :– यह रोग की अंतिम अवस्था है। थन अधिक कठोर हो जाता है। दूध पीले या सफेद रंग का दिखाई देता है जिसमें ठोस पदार्थ दिखाई देते हैं। थन के छिद्र के निकट घाव दिखाई देते हैं।

उपचार :– इस रोग का पता चलते ही पशु चिकित्सक से सलाह लेनी चाहिए। उपचार से पहले यदि सम्भव हो तो रोगी पशु के दूध की जांच के पश्चात ही उपचार शुरू करें।

थनैला रोग की रोकथाम :–

1. पशु के बिछावन, फर्श, थनों व नाँद की सफाई रखें व फर्श की 5–7 दिन में एक बार कीटाणु–नाशक (फिनाइल) दवाई से सफाई करें।
2. इस रोग से प्रभावित पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग रखें।
3. दूध निकालने वाले व्यक्ति के हाथ साफ होने चाहिए एवं नाखून कटे होने चाहिए।
4. रोगी पशु का दूध स्वस्थ पशुओं के बाद निकालें। स्वस्थ थनों का दूध प्रभावित थनों से पहले निकालें।
5. समय–समय पर दुधारू पशुओं के दूध की जांच करवाते रहना चाहिए।
6. प्रभावित पशु के थन से पूरा दूध निकाल लेना चाहिए। प्रभावित दूध न तो स्वयं प्रयोग करें और न ही जानवर को दें।
7. आजकल बाजार में जीवाणु रोधक घोल मिलते है। सम्भव हो तो दूध दोहन के बाद थनों को इस घोल में डुबायें।
8. बाहर से लाई गयी नई गाय का दूध सबसे बाद में निकालना चाहिए जब तक कि जांच से पता न चल जाये कि पशु थनैला रोग से प्रभावित नहीं है।
9. प्रभावित दूध में 5 प्रतिशत फिनाईल डालकर उसे फेंक देना चाहिए।
10. दूध दोहन के समय प्रारम्भिक कुछ धारें जीवाणु रोधक घोल में निकालनी चाहिएं। उन्हें कभी भी फर्श पर नहीं गिरने देना चाहिए।
11. दूध दोहन की सही विधि अपनाएँ व दूध पूरा निकालना चाहिए।
12. पशुशाला में गोबर व मूत्र की निकासी का समुचित प्रबन्ध होना चाहिए। मक्खियों इत्यादि से दुधारू पशुओं का बचाव करना चाहिए।
13. दूध दोहन के पश्चात पशु को खाने के लिए आहार देना चाहिएं जिससे कि दुग्ध दोहन के बाद पशु आधा घंटे तक बैठ न पाए क्योंकि दुग्ध दोहन के पश्चात् थन के छिद्र (15–20 मिनट) समय तक खुले रहते है जिससे कि संक्रमण होने की आशंका रहती है।

एंटीबायोटिक प्रयोग हेतु पशुपालकों द्वारा कुछ अपेक्षित सावधानियाँ

विकाश कुमार एवं जैन्सी गुप्ता

छोटे डेरी पशुपालक जिनके पास पशुओं की सख्यां 1 से 5 हैं

1. पशु चिकित्सा परामर्श की आवृति रोग की गंभीरता, बीमारी के साथ लक्षण और पूर्व–अनुभव से प्रभावित नहीं होनी चाहिए।
2. पिछले अनुभव, ब्रिकी कांउटरों से प्राप्त दवाओं की पर्ची तथा पड़ोसी किसानों द्वारा जानकारी के आधार पर इलाज के रूप में एंटीबायोटिक का प्रयोग जानवरों में नहीं करना चाहिए।
3. चिकित्सीय उपचार का केवल तब चुनाव करना, जब दुग्ध उत्पादन में गिरावट दर्ज होती है और रोग की अग्रिम अवस्था का पता चलता है, तर्क–संगत नहीं है। पशु–चिकित्सकों से संपर्क निरंतर बनाये रखना चाहिए तथा किसी भी तरह की कोई समस्या हो, उनसे परामर्श लेते रहना चाहिए।
4. रोग की गंभीरता के अनुसार एंटीबायोटिक की खुराक में परिवर्तन नहीं करना चाहिए। पशु चिकित्सकों के परामर्श को सदैव ध्यान में रख उनका पालन करना चाहिए।
5. रोगों के लक्षण में उतार–चढावों के अनुसार एंटीबायोटिक

दवाओं को देने के तरीके (मुख्यतः टेबलेट, घोल, मिश्रण के रूप में) और विधि (मुँह, इंजेक्शन द्वारा) में कोई परिवर्तन नहीं करना चाहिए। इनमे हस्तक्षेप करना पशुओं के लिए घातक हो सकता है।

जिन पशु–पालकों के पास पशुओं की संख्या 10 तक

1. भविष्य में आकस्मिक उपयोग के दृष्टि से बचे एवं कुचे एंटीबायोटिक का संरक्षण नहीं करना चाहिए। हर बार रोगोपचार के लिए पशु–चिकित्सकों से संपर्क कर नयी दवाएं लेना चाहिए।
2. बीमारी को होने से पूर्व उसके रोकथाम के लिए पशुओं में एंटीबायोटिक्स का नियमित रूप से प्रयोग नहीं करना चाहिए।
3. एंटीबायोटिक द्वारा उपचारित पशु का दूध बछड़े को नहीं पिलाना चाहिए, न हीं वाणिज्यिक ब्रिकी के लिए उसका उपयोग किया जाना चाहिए।
4. जब रोगों के लक्षण समाप्त हो जाये तथा ऐसा प्रतीत हो कि रोग का उन्मूलन हो चुका है, फिर भी पशु–चिकित्सक द्वारा निर्धारित दवाओं का खुराक पूर्ण करना चाहिए।
5. जब ऐसा प्रतीत हो कि रोग के निवारण में दवाओं की प्रतिक्रिया संतोजनक नहीं है तथा उपचार विफलता सिद्ध हो रही हो, उस समय दवाओं को पूर्णतः बंद नहीं करना चाहिएं। अपने पशु–चिकित्सक में विश्वास दिखाते हुए उनसे दोबारा परामर्श लें अथवा दवाओं को उपचार के पूर्व–निर्धारित समय अवधि तक चालू रखें।
6. नियमित रूप में एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग भविष्य में रोगों से बचने के लिए नहीं करना चाहिए, इससे एंटीबायोटिक प्रतिरोध में बढ़ोतरी होती है।

जिन पशु–पालकों के पास गाये–भैंस की संख्या 10 से ज्यादा

1. पशुशाला में पशुओं की संख्या अधिक होने के कारण एंटीबायोटिक दवाओं का प्रयोग नियमित रूप से स्वस्थ पशुओं में बीमारी का पूर्व–उपचार के रूप में नहीं करना चाहिए।
2. जिन पशुओं का उपचार चल रहा हो उन्हे चिन्हित कर अलग रखें तथा उनके उपचार के रिकॉर्ड बनाये रखें। उनके लिए रख–रखाव की अलग से व्यवस्था होनी चाहिए।
3. दुग्ध उत्पादन के अनुसार अधिक दूध देने वाले पशुओं को कम या पशुओं की तुलना में विशेष चिकित्सकिय प्राथमिकता देकर उनमें भेद–भाव नहीं करना चाहिए। रोगों से बचने हेतु सभी गाये–भैंस को पशु–चिकित्सा में वरीयता देनी चाहिए।
4. कुछ पशु–पालकों द्वारा स्रवण के अंत में गायों में एक लंबे समय तक एंटीबायोटिक का निरंतर प्रयोग किया जाता है। यह सूखी अवधि के दौरान उनके थनों को एवं उन्हे नए संक्रमणों के प्रति संरक्षण प्रदान करता है। इसका चुनाव एवं नियमित पालन के फल–स्वरूप एंटीबायोटिक प्रतिरोध उत्पन्न होता है, जिसके कारण एंटीबायोटिक दवाओं की रोग–उपचारण क्षमता कम होती है। कालांतर में, उस एंटीबायोटिक की उपचार क्षमता नष्ट हो जाती है।

अन्य सुझाव

1. टीकाकरण को महत्ता देने के फल–स्वरूप एंटीबायोटिक के अंधा–धुंध प्रयोग को नियंत्रित किया जा सकता है। टीकाकरण रोगों की रोक–थाम में काफी असरदार है, जिसके कारण रोगों की उत्पत्ति में कमी की जा सकती है। रोगों की आवृति में गिरावट होने के कारण एंटीबायोटिक का प्रयोग स्वतः कम हो जाएगा तथा इससे एंटीबायोटिक प्रतिरोध की गति में कमी आएगी।
2. होम्योपैथी, आयुर्वेदिक और घरेलू–नुस्खे रोगों के उपचार में प्रयुक्त एंटीबायोटिक के उपयोग को नियंत्रित करने हेतु एक वैकल्पिक उपाय के रूप से सुझाया जा सकता है। घरेलू तथा स्थानीय नुस्खों को हाल–फिलहाल के समय में काफी वरीयता प्राप्त हो रही है तथा उसे काफी सुरक्षित एवं असरदार माना जा रहा है क्यूंकि आज काफी एलोपैथिक (अग्रेंजी) दवाओं की क्षमता संदिग्ध प्रतीत हो रही है।

अतः एंटीबायोटिक का अंधा–धुंध एवं नियमित प्रयोग से बचें तथा वैकल्पिक उपचार विधि की ओर ध्यान दें, जोकि आकस्मिक स्थिति से निपटने के लिए जो विश्वसनीय उपाय हैं, उनकी उत्पति में किसानों की भूमिका सदैव अग्रणी एवं प्रेरणास्त्रोत रही है।

फार्म -4 (नियम) देखिए

1.	प्रकाशन स्थान	राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम (क्या भारत का नागरिक है?)	डा. आर.आर.बी. सिंह (हाँ)
	यदि विदेशी है तो मूल देश	लागू नहीं
	पता	निदेशक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
4.	प्रकाशक का नाम (क्या भारत का नागरिक है?)	डा. आर.आर.बी. सिंह (हाँ)
	यदि विदेशी है तो मूल देश	लागू नहीं
	पता	निदेशक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
5.	सम्पादक का नाम (क्या भारत का नागरिक है?)	डा. हँसराम मीणा (हाँ)
	यदि विदेशी है तो मूल देश	लागू नहीं
	पता	प्रधान वैज्ञानिक (डेरी विस्तार प्रभाग) राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार-पत्रों के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के सांझेदार हों।	निदेशक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

मैं, डा. आर.आर.बी. सिंह, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

प्रकाशक के हस्ताक्षर

रा.डे.अनु.सं., करनाल का किसान हैल्प लाईन न. 1800-180-1199 (टोल फ्री)

वेबसाइट : www.ndri.res.in

सम्पादक मण्डल

1.	डा. केहर सिंह कादियान	अध्यक्ष	डेरी विस्तार प्रभाग
2.	डा. अर्चना वर्मा	सदस्य	पशु अनु. एवं प्रजनन प्र.
3.	डा. मंजू आशुतोष	सदस्य	पशु शरीर क्रिया विज्ञान प्र.
4.	डा. चन्द्र दत्त	सदस्य	पशु पोषण प्रभाग
5.	डा. सुजीत कुमार झा	सदस्य	डेरी विस्तार प्रभाग
6.	डा. बी. एस. मीणा	सदस्य	डेरी विस्तार प्रभाग
7.	डा. राकेश कुमार	सदस्य	चारा अनु.प्र.केन्द्र
8.	डा. ओमवीर सिंह	सदस्य	पशु अनु. एवं प्रजनन प.
9.	डा. हँस राम मीणा	सम्पादक	डेरी विस्तार प्रभाग

बुक-पोस्ट
त्रैमासिक मुद्रित सामग्री

भारतीय समाचार पत्र रजिस्टर के अधीन पंजीकृत संख्या 19637/7

सेवा में,

....

....

....

प्रेषक

डेरी विस्तार प्रभाग,

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान,

करनाल - 132 001 (हरियाणा), भारत

प्रकाशक : डा. आर.आर.बी. सिंह, निदेशक, रा.डे.अनु.सं., करनाल

रुपरेखा : डा. केहर सिंह कादियान, अध्यक्ष, डेरी विस्तार प्रभाग

सम्पादक : डा. हँस राम मीणा, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग

प्रूफ रीडिंग : श्रीमती कंचन चौधरी, सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी, राजभाषा एकक

AARON Media 098964 33225

प्रकाशन तिथि : 31.03.2018

मुद्रित प्रति - 3000